International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 1; January 2017; Page No. 119-120

भारतीय लोकतंत्र के बदलते परिवर्त्य

जितेन्द्र कुमार

शोधछात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्व विद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

यदि देखा जाय तो हम ऐसे भारतीय लोकतन्त्र में रह रहे हैं जिसकी आशा इसके निर्माताओं ने नहीं की थी। हम नित नए दिन अराजक और विनाशकारी व्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं। हमने लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना का सपना देखा था किसी व्यक्ति अथवा संस्था के राज्य का नहीं, हम जातिरहित समाज चाहते थे किन्तु ऐसा समाज नहीं जिसमें जाति ही विभाजन का औजार बन जाय, हमने एक अखण्ड भारत की कल्पना की थी किन्तु ऐसे भारत की नहीं जिसमें राज्य आपस में ही झगड़ें, हम ऐसा लोकतन्त्र चाहते थे जिसमें 'कानून के शासन' की सर्वोच्चता हो किन्तु ऐसा लोकतन्त्र नही चाहते थे जिसमें शासकों द्वारा इसे हड़प लिया जाय।

हमारे राजनीतिक व्यवस्था में घटित हो रही इस प्रकार की अलोकतान्त्रिक गतिविधियों ने, लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में हमारे विश्वास को विचलित किया है। उदाहरण के तौर पर जब एक सामान्य नागरिक यह कहता है कि वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था, जो कि न ही लोकतान्त्रिक और न ही कल्याणकारी; से बेहतर ब्रिटिश उपनिवेशवादी व्यवस्था थी, तो हमें इस पर खुले मस्तिष्क से विचार करना चाहिए।

लोकतन्त्र, शासन की प्रक्रिया में, जनसहभागिता एवं उचित विमर्श की मांग करता है। लोकतन्त्र में प्रभावी सहभागिता तब तक नहीं हो सकती, जब तक जनता और राजनीतिज्ञ अपनी भूमिका का निवर्हन सावधानी से न करें। जो भी लोग राजनीति में प्रवेश के इच्छुक हों, उनमें जनता के कार्यों के प्रति समर्पण की भावना होनी चाहिए। आज भारतीय लोकतन्त्र में अनेक समस्याएं गहरे पैठ गयी है। जिसका कारण लोकतान्त्रिक मूल्यों के साथ सामाजिक मूल्यों में गिरावट है। चुनावी व्यवस्था में सुधार कर एवं उत्तरदायी जन प्रतिनिधियों का चुनाव करके हम अपने लोकतन्त्र को सशक्त एवं लोक कल्याणकारी बना सकते हैं।

भारत विश्व का सबसे वृहद प्रतिनिधि लोकतंत्र का वाहक देश है। प्रत्येक नागरिक को यह राजनीतिक अधिकार है कि वह अपनी पसन्द के प्रतिनिधि का चुनाव कर सके और उस चुने हुए प्रतिनिधि के माध्यम से स्वयं के ऊपर शासन कर सकें। भारतीय संविधान सभा में प्रतिनिधि लोकतंत्र की आवधारणा अपनाए जाने से पूर्व व्यापाक चर्चा–परिचर्चा हुई। इस विधा को अपनाते समय यह ध्यान रखा गया कि भारत जैसे विशाल देश में भी प्रत्येक जन को अपने राजनीतिक अधिकार होने का बोध हो सकें। प्रत्येक नागरिक अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता का प्रयोग कर सके। प्रत्येक नागरिक प्रतिनिधि को पदयुक्त और पदमुक्त करने की शाक्ति से सम्पन्न हो। इस बात को भी ध्यान रखा गया कि दुरूह सामाजिक बनावट को इस तंत्र के द्वारा तोड़ा जा सके समाज के किसी भी तबके का व्यक्ति चुनाव में भागीदारी कर सकता है, किसी राजनीतिक दल का कार्यकर्ता बन सकता है, चुनाव लड़ सकता है एवम् मतदान का प्रयोग 'समानता' की आवधारणा के साथ कर सकता है। वयस्क मताधिकार प्रणाली इसके मूल में है। भारत में प्रतिनिधिक संसदात्मक लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अपनाया गया है। जिसमें विधायिका, जन प्रतिनिधियों की संस्था है जो कानून का निर्माण जनाकांक्षाओं के अनुरूप करती है। कार्यपालिका इन कानूनों के क्रियान्वयन हेतु जिम्मेदार होती है और वह जनप्रतिनिधिक संस्था के प्रति उत्तरदायी होती है। अर्थात् जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से सर्वोच्च होती है।

वर्तमान समय में, बिना नियमित प्रतिनिधिक व्यवस्था को अपनाए; जिसके माध्यम से एक व्यक्ति अथवा संस्था दूसरे की ओर हाथ बढ़ाती है, किसी भी व्यवस्था अथवा सामाजिक जीवन का जीवन्त रहना कठिन है अर्थात प्रत्येक व्यक्ति अधिकतर कार्यों को प्रत्यक्षतौर पर न करके अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से करता है। यही वही प्रक्रिया है जिसके माध्यम से वह स्वयं पर शासन करता है। ''राजनितिक प्रतिनिधित्व वह अवधारणा है जिसके माध्यम से सरकारी नीतियों का निर्माण और क्रियान्वयन किया जाता है और जन की आकांक्षाओं को लक्षित किया जाता है। वर्तमान प्रतिनिधिक लोकतंत्र की यही प्रक्रिया 'प्राण' है।

प्रतिनिधित्व एक व्यापक अवधारणा है। प्रतिनिधित्व ''एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रत्येक नागरिक का दृष्टिकोण, प्राथमिकता, अपेक्षाओं एवं प्रवृत्ति को समझा जा सकता है। यह इस ओर भी संकेत करता है जिसमें उसके द्वारा चुने गए थोड़े से लोग उसकी भावनाओं और अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार करते हैं तथा उसकी सहमति प्राप्त करते हैं।[1] प्रतिनिधित्व ''प्राधिकारी तन्त्र और जनता के मध्य एक घनिष्ठ सम्बन्ध है। शासनतन्त्र का प्रत्येक निर्णय जनांकाक्षाओं की पोषकता से परिपूर्ण होना अनिवार्य है। प्रतिनिधि सरकार उसे ही कहा जा सकता है जो पारदर्शिता और जनसहभागिता को सुनिश्चित और प्रमाणित करे; जिसका सर्वप्रमुख उपकरण चुनावी प्रक्रिया है। और इन चुनावों के माध्यम से शासन तन्त्र का चुनाव किया जा सके।

चुनाव नागरिकों को सक्षम बनाते हैं। लोग चुनावों के माध्यम से अपने प्रतिनिधियों को चुनते हैं और अप्रत्यक्षतौर पर महत्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करते हैं। एक मतदाता 'अ' अथवा 'ब' को मतदाता करते समय इस प्रश्न का उत्तर ढूढ़ने का प्रयास करता है, जिसे प्लेटो और अरस्तू ने हजारों वर्ष पूर्व खोजने का प्रयत्न किया था– 'सरकार का सर्वोत्तम प्रकार क्या है?' भले ही वह प्लेटो और अरस्तू के विचारों को न समझता हो किन्तु वह इतना तो चाहता है कि उसके द्वारा चुने गए 'अ' अथवा 'ब' उपयोगी हैं अथवा नहीं ! इस बात को न समझते हुए भी वह प्रत्येक बार यही उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है कि – सरकार के रूप में उसके हेतु बेहतर विल्कप क्या हो सकता है? समय के बदलने के साथ–2 वह और उसके साथी निर्वाचक उत्तर प्राप्त करने लगते हैं। हम यह अवश्य कह सकते हैं कि लोकतन्त्र में बहुमत शासन करता है जबकि अल्पसंख्यक को चर्चा और समालोचना के द्वारा इसमें भागीदारी का अवसर प्राप्त होना चाहिए जिससे उनका सभी प्रकार का उत्थान हो सके।

प्रतिनिधि लोकतन्त्र इस अवधारणा पर आधारित है कि जो कोई भी व्यक्ति प्रतिनिधि चुने जाने का इच्छुक हो, वह निर्वाचकों के प्रति उत्तरदायित्व निभाने को भी तैयार हो। प्रतिनिधित्व और

उत्तरदायित्व, लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के एक ही सिक्के के दो पहलू है। इसी में प्रतिनिधित्व की उपादेयता निहित है। उत्तरदायित्व नीति क्रियान्वयन और निर्वाचकों के मध्य सामंजस्य स्थापित करने की सुदृढ़ व्यवस्था है। यह प्रतिनिधियों के द्वारा उनके प्रति सहमति का मापदण्ड निर्धारित करता है। इसके द्वारा हमारी संवैधानिक व्यवस्था सशक्त होती है..... यह इस बात को प्रमाणित करता है कि हमने उत्तरदायी संविधान के साथ, उत्तरदायित्व से पूर्ण नेतृत्व की भी रचना की है।[2] निहितार्थ यह है कि यदि 'क' प्रतिनिधि है और 'ख' निर्वाचक है, तो 'क' को 'ख' के प्रति जिम्मेदार होना चाहिए।

वर्तमान राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में, राजनीति के प्रति विश्वास का उल्लंघन किया जा रहा है, और नैतिकता मिथक और अप्रयोज्य बनती जा रही है। जन प्रतिनिधि सत्ता के उपासक हो गए हैं। वे सत्ता प्राप्त करने हेतु अथवा सत्तासीन होने के उपरान्त भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, अपराधीकरण, जातिवाद, भाई–भतीजावाद को बढ़ावा देते हैं। इस प्रक्रिया में व्यावहारिक राजनीतिक उत्तरदायित्व की विधा से परे हटकर प्रतिनिधियों के 'स्व के प्रति उत्तरदायित्व' को पोषित कर रही है। इस प्रकार की राजनीति का ही कारण है कि शक्ति पूजा ने लोकतान्त्रिक व्यवस्था का ठगा हो और उसकी मेखला को तोड़कर रख दिया है। रिश्वतखोरी और भयादोहन चुनावी राजनीति का व्यापक साधन बन चुका है। सरकारें और प्रतिनिधि बड़े–2 व्यापारिक घरानों के मातहत बनते गए हैं। लोक सत्पत्ति का निजी सम्बन्धों हेतु दुरूपयोग आम बात हो गयी है और सोचनीय विमर्श यह है कि जनता के बीच में इन्हें वास्तविक मान लिया गया है। यहाँ तक कि इस प्रकार के प्रतिनिधि जन सम्मान भी प्राप्त करते हैं।

हमारी राजनीतिक संस्कृति का पतन मुख्यतः इस तथ्य में समाहित है कि जन के प्रतिनिधि द्वारा अपने उत्तरदायित्वों को गौण माना गया है। उनका चारित्रिक पतन हुआ है। इसका कारण जन स्वयं भी हैं। हमने इन सभी समस्याप्रद मुद्दे की उपेक्षा की है। हमने चुनावी व्यवस्था को महत्वपूर्ण नहीं माना। हमने मतदान तक अपने को सीमित कर लिया है। चुनावी व्यवस्था ने अनेक ऐसे बचाव के रास्ते निर्मित कर दिए हैं जिनके माध्यम से भ्रष्ट, अपराधी और समाज विरोधी तत्व हमारी राजनीति की मुख्यधारा से जुड़ जाते हैं। इनके कारण सुशासन की अवधारणा, कुशासन की नकारात्मक छवि में ढलने लगी है। प्रतिनिधियों के उत्तरदायी चरित्र की आशा तभी की जा सकती है जब स्वतन्त्र और निष्पक्ष, चुनावों के माध्यम से नागरिकों की राजनीतिक भागीदारी बढ़े। चुनावी व्यवस्था में बचाव के रास्ते बन्द हों।

हमें यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि मतदान व्यवहार प्रतिनिधिक लोकतन्त्र और हमारे संविधान का मूलभूत आधार है जो गुणवत्तापूर्ण सरकार हेतु जिम्मेदार है। यह एक संस्थात्मक कार्यशाला की भाँति है जिससे एक सरकार प्रभावित होती है और लोकप्रिय चयन के सिद्वान्त के द्वारा, उत्तरदायी प्रतिनिधिक सरकार का निर्माण होता है। यह इस बात की सूचना प्रदान करता है कि सरकार क्षमतावान और उद्देश्य परक है अथवा नहीं! प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में 'पर्यावरण' से 'जन' की माँगे नीति निर्धारकों एवं राजनीतिक व्यवस्था की ओर विभिन्न तकनीकों के माध्यम से आती हैं। माँगों के प्रति समर्थन की तीव्रता राजनीतिक व्यवस्था को तद्नुरूप नीति निर्माण को विवश करती है। छात्रों का एक समूह हिंसात्मक/अहिंसात्मक गतिविधियों के द्वारा एवं सार्वजनिक सम्पत्ति को हानि पहुँचाकर सरकार की नीति विशेष को प्रभावित करने का प्रयास करता है, एक पर्यावरण प्रेमी अपनी माँगों को लेकर आमरण अनशन कर सकता है, महिलाओं के विरूद्ध होनी वाली घटनाओं के विरूद्ध, महिलाओं का एक समूह आन्दोलन कर सकता है। इसी प्रकार समाचार पत्र, सरकार के विरूद्ध अपना विरोध दर्ज कराने हेतु, अपना प्रथम अथवा सम्पादकीय पृष्ठ खाली छोड़ सकता है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं जिनके द्वारा लोग अपनी 'माँगों' को सशक्त रूप में रखते हैं और जन विचारों के अनुरूप 'निर्गत' प्राप्त करते हैं।

किसी भी संगठन का अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता है कि उसकी क्रियाशीलता नियमित है अथवा नहीं। संगठन के सदस्यों में एकजुटता की भावना प्रतिनिधि की सक्रियता से तीव्रतर होती है। प्रत्येक संगठन का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि वह विभिन्न क्रियाकलापों से राजनीतिक शक्ति प्राप्त करे अथवा सरकार के नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका प्राप्त करे। इन उद्देश्यों की पूर्ति बिना एक राजनीतिक दल का गठन किए नहीं की जा सकती। राजनीतिक दल वह संस्थाएँ हैं जो लोकमत की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है और वह यंत्र होती हैं जो लोकतन्त्र को क्रियाशील बनाता है। राजनीतिक दल वह महत्वपूर्ण उपकरण हैं जो एक समूह और व्यक्ति को आपस में जोड़कर राजनीतिक शक्ति का सृजन करते हैं। उनके द्वारा लोगों को राजनीतिक शिक्षा प्रदान की जाती है और उनको जागरूक बनाया जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका वाल्यूम–19, पृष्ठ–15
2. गाज़िया, अल्फ्रेड डे, पोलिटिकल बिहेवियर, द फ्री प्रेस, न्यूयार्क 1965, पृष्ठ–158
3. रेने ऑस्टिन, द गवर्निंग ऑफ मैन, होल्ट एंड विंस्टन, न्यूयार्क, 1958, पृष्ठ–25
4. बराक, ए. एच, रिप्रजेंटेशन एंड रेस्पोंसिबल गवर्नमेंट : एन एसे ऑन ब्रिटिश कान्स्टीटयुशन, अनविन लिमिटेड, लन्दन, 1964
5. इलेक्शन एंड इलेक्टोरल रिफार्म इन इंडिया (सम्पादित), सुभाष कश्यप, 1971
6. कपूर, ए. सी., प्रिन्सिप्ल ऑफ पोलिटिकल साइंस, एस. चाँद कंपनी, नयी दिल्ली, 1981, पृष्ठ–339
7. कोहली, अतुल (साम्पादित), द एक्सेस ऑफ इंडियन डेमोक्रेसी, यू.के.: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस